वैदिक व्याख्यान माला - छठा व्याख्यान

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

(विश्वमें स्थायी शान्ति स्थापन करनेका कार्यक्रम)

लेखक

पं. श्रीपाद दामोदर सातवळेकर

स्वाध्याय-मण्डल, 'आनन्दाश्रम', किल्ला-पारडी, जि. सूरत

मूल्य छः आने

शान्तिकी इच्छा

प्रत्येक मनुष्य शान्ति चाहता है। पर नहीं मिलती और अशान्ति बढ़ रही है। इसलिये यहां वैदिक ऋषि-मुनियोंने सोचा और सिद्ध किया हुआ शान्ति स्थापन करनेका मार्ग बतानेका यत्न किया है। पाठक इसका अधिक विचार करेंगे और अनुष्ठान करेंगे, तो निःसंदेह शान्ति स्थापन की जा सकती है।

पढ़ो और प्रयत्न करो।

स्वाध्याय-मण्डल
किल्ला-पारडी (जि. सूरत)
१।६।५२

लेखक

ॐ

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

भारतवर्षमें सर्वत्र पूजा, उपासना, आराधना करनेके पश्चात् बड़े आवाजसे "ओ ३ ऽ ऽ ऽ ऽ म्; शा ३ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ न्तिः; शा ३ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ न्तिः; शा ३ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ न्तिः" ऐसा गर्जना करके कहते हैं। सन्ध्या करनेके अन्तमें, उपासनाके अन्तमें, प्रवचनके अन्तमें इस तरह त्रिवार शान्तिका उच्चारण किया जाता है। कई स्थानोंपर जहां सामुदायिक उपासना करते हैं, वहां उपासनाकी समाप्तिके पश्चात् सब मिलकर इस शान्तिका घोष त्रिवार करते हैं। सब हिंदु वे सनातनधर्मी हों, आर्यसमाजी हों, या नवमतवादी धार्मिक हों, वे अवश्य इस त्रिवार शान्तिका घोष करेंगे। इस त्रिवार शान्तिमें ऐसा एक मंगलस्वर है, कि जो इसका घोष एकाग्र मनसे करता है, उसके मनमें सचमुच शान्तिके लिये स्थान हुआ है ऐसा प्रतीत होता है। उसको इसके बोलनेके समय इस शान्तिके आस्वादका अनुभव होता है।

त्रिवार शान्तिका ध्येय

इस त्रिवार शान्तिका ध्येय क्या है? यह शान्ति पद तीन ही वार क्यों बोला जाता है, उसके पूर्व 'ओं' कार क्यों बोला जाता है? इसका हेतु क्या है? किस साध्यका यह साधन है? इसका विचार करनेसे पता लग सकता है कि, तीन स्थानोंमें शान्ति स्थापन करनेके लिये यह तीन वार शान्ति पदका घोष किया जाता है।

१ शान्तिः— व्यक्तिमें शान्ति स्थापन करनी है,
२ शान्तिः— राष्ट्रमें शान्ति स्थापन करनी है, और
३ शान्तिः— जगत्में शान्ति स्थापन करनी है।

यह त्रिवार शान्तिका अर्थ, उद्देश्य और ध्येय है। मनुष्य इस पृथ्वीपर उत्पन्न हुआ है, वह इन तीनों शान्तियोंकी स्थापना यहां करनेके लिये ही जन्मा है। पृथ्वीपर इन तीनों शान्तियोंकी स्थापना होनी चाहिये। यहां इस पृथिवीपर अशान्ति रहनी नहीं चाहिये। यह इस पृथिवी पर शान्तिस्थापन करनेका कार्य यहां रहनेवाले मनुष्योंको ही करना चाहिये। यह कार्य यहां कोई दूसरे स्थानसे आकर कर नहीं सकेगा।

आध्यात्मिक कष्ट

इस समय हम देख रहे हैं कि व्यक्तिके शरीरमें नाना प्रकारके रोग होते हैं, इन्द्रियोंकी कमजोरियां हैं, मनमें काम क्रोध लोभ मोह मद तथा मत्सर आकर बड़ा कोलाहल मचा रहे हैं, कुविचार कुमतियां और कुबुद्धियां यहां निवास कर रही हैं, पापसंकल्प वारंवार किये जाते हैं, कुकल्पनाएं वारंवार आकर सता रही हैं। इस तरह एक व्यक्तिमें अशान्ति, दुःख कष्ट भोगने पड़ रहे हैं। इनसे कोई छूटता नहीं। इनका नाम आध्यात्मिक दुःख हैं। ये दूर होने चाहिये और आध्यात्मिक शान्ति, आनन्द और प्रसन्नता मनुष्यको प्राप्त होनी चाहिये। ये आध्यात्मिक कष्ट शरीर, इंद्रियां, मन, बुद्धि, पाचन, उत्सर्जन आदि अवयव और उनकी क्रियाओंके संबंधसे हो रहे हैं। कोई मनुष्य ऐसा मिलेगा नहीं कि, जो इन कष्टोंसे बचा हो। मनुष्यने इनसे बचनेके लिये वैद्यशास्त्र, चिकित्साके अनंत उपाय निर्माण किये हैं, पर उपायोंकी अपेक्षा रोग ही अधिक बढ़ रहे हैं और मनुष्योंको दिन रात दुःख दे रहे हैं जिनसे यह मानव सर्वदा अशान्त हो रहा है।

आधिभौतिक कष्ट

अब दूसरी अशान्ति राष्ट्रीय अशान्ति है। इस विषयमें हरएक राष्ट्रमें पीडा है। हडतालें हो रही हैं, मजदूरोंके संघर्ष चल रहे हैं, राजा प्रजाके उपद्रव बढ रहे हैं, पूंजी-

पति और कर्मचारियोंके वैमनस्य बढ रहे हैं, युद्ध खडे हो रहे हैं, नये नये संहारक अस्त्र मानव संहारके लिये निर्माण किये जा रहे हैं। युद्धके साधन बढाये जा रहे हैं, समझोतेके लिये सभायें होती हैं उनमेंसे ही युद्धकी ज्वाला भडक उठती है। शान्तिके प्रस्तावसे संघर्ष नये नये रूप धारण करके प्रजाजनोंको कष्ट दे रहे हैं। विवाह विच्छेद होकर कुटुंबकी बुनियाद ही टूट जाती है, इसका विचार करनेके लिये भी किसीको समय नहीं है। व्यापार व्यवहारमें काला बाजार हो रहा है और गरीबोंका संसार टूट रहा है। धनका मूल्य कम हो रहा है और महर्घता बढ रही है। मनुष्योंके अन्दरकी मानवता नष्ट होकर पशुता बढ रही है। स्त्रियोंका सामुदायिक अपहरण होकर सहस्रों कुटुंब दुःखाग्नि में जल रहे हैं, पर इसकी पर्वाह किसीको नहीं है। प्राचीन समयमें सिंहव्याघ्रादि क्रूर पशुओंका ही भय था। पर मानवी सिंहव्याघ्रोंकी क्रूरता उससे भी अधिक हो रही है।

यह आधिभौतिक कष्टोंका स्वरूप है। प्राणिमात्रसे होनेवाले कष्ट आधिभौतिक कहलाते हैं। इस कष्टका संक्षेपसे स्वरूप यह है। यह हरएक राष्ट्रमें है। अब आधिदैविक कष्टोंके विषयमें देखिये—

आधिदैविक कष्ट

आधिदैविक कष्ट सब प्रकारके जागतिक कष्ट हैं। भूचाल, अग्निदाह, बिजलीके पतनसे आग, अतिवृष्टी, अनावृष्टि, नदीकी बाढ, समुद्रमें जहाजोंका डूबना, विमानोंका पतन, भूमिका विदीर्ण होना, ज्वालामुखीका उद्रेक आदि अनेक प्रकारके ये कष्ट हैं। पञ्चमहाभूतोंसे जो उपद्रव होते हैं वे सब इसमें आते हैं। झंझावात, अग्निकाण्ड, ओलोंकी हिमवृष्टी, उससे शस्यका नाश, कृमीयोंके कारण वनस्पतियोंका नाश, सूर्यके तापसे नाश, अतिशीतसे नाश ये सब इस आधिदैविक कष्टोंमें शामील हो सकते हैं। विज्ञानसे जो संहारक शस्त्र निर्माण हो रहे हैं वे वास्तवमें आधिदैविक हैं, परंतु उनका प्रयोग मनुष्य करते हैं, इसलिये उनका समावेश आधिभौतिक कष्टोंमें भी हो सकता है। सारांशसे आधिदैविक दुःखोंका यह स्वरूप है।

मनुष्योंको ये सब कष्ट दूर करनेके लिये यत्न करना चाहिये। मनुष्यकी उत्पत्ति इसी कार्यके लिये हुई है। यहां आकर मनुष्यको जो पुरुषार्थ करना है वह यही है। आध्यात्मिक दुःख अपने शरीरके अन्दर होते हैं, आधिभौतिक दुःख इस पृथ्वीपर, राष्ट्रमें अथवा बाहर प्राणियोंसे होते हैं और आधिदैविक दुःख पृथिवी, आप, तेज, वायु आदि देवताओंके कारण होते हैं। ये तो होते ही रहेंगे। और मनुष्यको इन्हें हटानेके लिये सतत दक्षतासे प्रयत्न करना ही चाहिये।

क्या ऐसा प्रयत्न अकेला मनुष्य कर सकता है, या सामूहिक रूपसे राष्ट्रीय शासन शक्तिद्वारा इसके लिये प्रयत्न करना चाहिये। इसका विचार अब करना चाहिये। हमारे इतने विचारसे यह सिद्ध हुआ कि, (१) मनुष्यके शरीरके अन्दरके दुःखोंको दूर करनेका कार्य स्वयं मनुष्य कर सकता है, (२) राष्ट्रके अन्दर होनेवाले दुःखोंको राष्ट्रके शासक दूर कर सकते हैं और (३) राष्ट्रके बाहरके सब दुःखोंको दूर करनेका कार्य राष्ट्रसमूह कर सकता है।

जागतिक शान्ति

हम सब 'ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः' ऐसी घोषणा करते हैं, पर विचार करनेसे पता लग सकता है कि हमारे त्रिविध दुःखोंको दूर करनेका साधन हरएक व्यक्तिके पास नहीं होता है। प्रथम 'जागतिक शान्ति' के विषयमें सोचेंगे। विश्वशान्तिके दो विभाग हैं। एक वह अशान्ति है कि जो दो राष्ट्रोंके संघर्षसे उत्पन्न होती है और दूसरी वह कि जो अनावृष्टि अतिवृष्टि आदि दैवीकारणोंसे होती है। इसमें एक व्यक्ति क्या कर सकती है? अनेक प्रबल राष्ट्र मिलकर इस विषयमें कुछ कर सकते हैं। इस समय रशिया और अमेरिका ये दो राष्ट्र प्रबल हैं और प्रभावी भी हैं। ये मिलकर विश्वशान्तिकी योजना करना चाहें तो कर सकते हैं। जागतिक युद्ध ये बंद भी कर सकते हैं और शुरू भी कर या करवा सकते हैं। आज पृथ्वीपर इनको छोडकर दूसरा कोई ऐसा नहीं है कि, जो जागतिक शान्तिकी स्थापना या जागतिक शांतिका विनाश कर सकता है। इसके अतिरिक्त भूचाल, ज्वालामुखी, नदीकी बाढ आदिके लिये उपाय योजना करना है तो भी ये जो दोचार बडे बडे राष्ट्र हैं वे ही मिलकर विज्ञानकी सहायतासे कुछ कर सकते हैं। कोई एक व्यक्ति इस कार्यको कर सके ऐसा इस समय इस पृथ्वीपर नहीं है।

रशिया तथा अमेरिकाके अतिरिक्त कोई अन्य राष्ट्रके मन्त्री या कोई प्रधानमंत्री भी इस जागतिक शान्तिका कार्य नहीं कर सकते, फिर अन्य व्यक्ति नहीं कर सकेंगे, इसमें संदेह ही क्या है ? इस तीसरी शान्ति द्वारा वैदिक धर्मने लोगोंपर कितना बडा दायित्व रखा है वह देखिये। वैदिक धर्ममें इतना बडा कार्यक्रम रखा है जो मानवोंको करना चाहिये। हर कोई कहेगा कि इस जागतिक शान्तिके कार्यक्रमको न तो व्यक्तिशः हम निभा सकते हैं और न संघशः पूर्ण कर सकते हैं। इस कार्यक्रमको करनेके लिये जितनी शक्ति चाहिये, उतनी शक्ति हममें नहीं है। जो राष्ट्र विश्वभरमें अत्यंत प्रबल राष्ट्र होंगे, वेही मिलकर इस विश्वमें शान्ति रखनेके कार्य कर सकते हैं। उनसे भिन्न कोई मनुष्य जागतिक शान्तिके लिये प्रयत्न भी नहीं कर सकता, फिर इसको पूर्णतया निभाना तो बहुत ही दूरकी बात है। इतने महत्त्वका यह कार्यक्रम है।

राष्ट्रीय शान्ति

जागतिक शान्ति एक व्यक्ति नहीं स्थापन कर सकती है तो न सही, परंतु राष्ट्रमें शान्ति तो एक व्यक्ति स्थापन कर सकती है, ऐसा कोई कह सकते हैं। पर वह भी सत्य नहीं। राष्ट्रमें गुण्डोंका उपद्रव, चोर, खूनी, डाकू, आदि दुष्ट लोगोंके उपद्रव एक व्यक्ति किस तरह दूर कर सकती है ? व्यक्तिकी शक्ति इस कार्यके लिये पर्याप्त नहीं है। जिस समय राष्ट्रकी शासक शक्ति राष्ट्रमें शान्ति स्थापन करनेके लिये अपनी सब शक्ति लगायेगी, गुण्डोंका दमन करेगी, सज्जनोंका परित्राण करेगी, शान्तिकी स्थापना करेगी, उस समय राष्ट्रमें शान्तिस्थापन हो सकेगी। अर्थात् यहां भी एक व्यक्तिका सामर्थ्य पर्याप्त नहीं है। राष्ट्रकी संपूर्ण शक्ति राजाके अथवा महामंत्रीके आधीन रहती है। उसकी आज्ञासे वह राष्ट्रशासन शक्ति कार्य करनेमें प्रेरित होती है। इसलिये राष्ट्रमें शान्ति स्थापन करना या न करना यह सब राजा अथवा महामंत्रीके अधीन है। दूसरी किसी व्यक्तिके अधीन नहीं है।

तीसरी शांति जागतिक है और यह दूसरी शान्ति राष्ट्रीय है। ये दोनों शान्तियां किसी भी एक व्यक्तिके प्रयत्नसे सिद्ध होनेवाली नहीं हैं। राष्ट्रीय शान्ति शासककी प्रेरणासे सिद्ध हो सकती है और जागतिक शान्ति प्रबल राष्ट्रोंके शासकोंके संघटित प्रयत्नसे सिद्ध हो सकती है। व्यक्ति कितनी भी आत्मिक शक्तिसे युक्त क्यों न हो, वह इन शान्तियोंकी स्थापना नहीं कर सकती। राष्ट्रशासकोंके संघटित प्रयत्नोंसे ये दोनों शान्तियोंकी स्थापना हो सकती है, अन्यथा नहीं। अब वैयक्तिक शान्तिके विषयमें देखिये—

वैयक्तिक शान्ति

आध्यात्मिक शान्ति व्यक्तिके शरीर, इंद्रियां, मन, बुद्धि तथा आत्माके अन्दरकी शान्ति है। इसलिये इसको वैयक्तिक शान्ति कह सकते हैं। कई लोग कहते हैं योग आदि साधनोंके अनुष्ठानसे यह वैयक्तिक शान्ति प्राप्त हो सकती है। परंतु इसमें भी कई बातें विचार करने योग्य हैं।

योगसाधन करनेसे वैयक्तिक शान्ति प्राप्त हो सकती है यह सत्य है, पर योगसाधन कहां हो सकता है, देखिये-

योगसाधनके लिये योग्यस्थान

सुभिक्षे धार्मिके देशे। यो० प्रदीपिका

' जिस देशमें अच्छा अन्न मिलता है और जिस देशमें धार्मिक राज्यशासन है, जहां धार्मिक लोग रहते हैं। उस देशमें योगसाधन हो सकता है। ' हरएक स्थानपर योगसाधन नहीं हो सकता। जिस देशपर धार्मिक शासकोंका राज्य नहीं है, जहां गुण्डोंका राज्य है, मारपीट, खून, डाके, आदि जहां होते रहते हैं, जहां शान्ति नहीं रहती, जहां उत्तम अन्न मिलता नहीं, वहां योगसाधन नहीं हो सकता। योगसाधन करनेके लिये आदमी बैठ जांय, और बाहर मारपीट चलती रहे, जालपोल होती रहे, लूट और डाके होते रहें, तो इस साधकको अपने जीवनकी सुरक्षितता नहीं रहेगी और ऐसी अशान्तिमें यह योगसाधन कभी नहीं कर सकेगा ! फिर इसे ऐसे गुण्डोंके देशोंमें योगसाधनसे शान्ति किस तरह प्राप्त हो सकेगी ? इसलिये वैयक्तिक शान्ति भी योगसाधन पर निर्भर है और योगसाधन उक्त कारण उत्तम राज्यशासनसे ही होनेवाला है।

इससे यह सिद्ध हुआ कि व्यक्तिमें शान्ति, राष्ट्रमें शान्ति और जगत्में शान्ति ये तीनों शान्तियां उत्तम सुयोग्य राज्यशासनसे ही सिद्ध होनेवाली हैं। विना उत्तम सुयोग्य राज्यशासनके ये शान्तियां सिद्ध होनेवाली नहीं हैं।

अब तीसरी शान्तिमें और एक विभाग है, उसका विचार करनेका कार्य शेष है। वह है भूचाल, ज्वालामुखी, विद्युत्पतन, अतिवृष्टी आदि अशान्तिको दूर करना। यह भी राजाश्रयसे ही हो सकेगा तो हो सकेगा। व्यक्तिके प्रयत्नसे इसमें कुछ होगा ऐसा दीखता नहीं है। इसका कारण यह है कि इसका प्रबंध करनेके लिये जो व्यवस्था करनी पडेगी वह अत्यंत व्ययसे होनेवाली है और उतना व्यय कोई एक व्यक्ति कर नहीं सकती।

बडे प्रबन्धोंका कार्य

जैसा अनावृष्टीका प्रतीकार नहर आदिके प्रबंधसे हो सकता है, अतिवृष्टीका प्रतीकार जलके लिये उत्तम पर्याप्त विस्तृत गमन मार्ग कर देनेसे हो सकता है। इस तरहके बडे बडे प्रबंध करनेका कार्य शासक संस्थाके द्वारा हो सकता है। यह कार्य व्यक्तिकी शक्तिसे होनेवाला नहीं है। इन आपत्तियोंमें कई आपत्तियां ऐसी हैं कि उनका प्रतीकार करनेके साधन मनुष्यके पास इस समय नहीं है। जैसे प्रचंड वायु प्रकोपको रोकनेका कार्य मनुष्य कर नहीं सकता, क्योंकि उसके पास आज वायुवेगको रोकनेके साधन अधिक व्यय करनेपर भी नहीं है। अस्तु इसका तात्पर्य यह है कि ये सब आपत्तियोंको रोकनेके प्रबंध शासकसंस्था कर सकेगी, तो ही होंगे। व्यक्तिके प्रयत्नसे इसमें कुछ भी बननेवाला नहीं है। जो व्यक्तिके अन्दर परिणाम करनेवाला योगसाधन है, वह भी सुराज्यमें ही होनेवाला है, गुण्डोंके जहां उपद्रव होते रहते हैं, वहां योगसाधन भी नहीं होगा। फिर अन्य साधनोंका तो निःसंदेह राजाश्रय पर ही अवलंबन है। सारांशसे यह कह सकते हैं कि, इन तीनों शान्तियोंकी साधना राज्यशासक शक्ति पीछे रही, तो ही हो सकती है, अन्यथा नहीं हो सकती।

बलसे होनेवाला कार्य

इससे पता लग सकता है कि 'ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः' का घोष करनेसे राजकीय दायित्व हमारे पर कितना आता है। प्रत्येक वैदिकधर्मीको इसका विचार करना चाहिये और यह दायित्व निभानेके लिये कटिबद्ध रहना चाहिये। यदि आप इन तीनों शान्तियोंकी घोषणा करनेकी इच्छा करते हैं, तब तो आपको अपने पीछे प्रबल शासनसंस्थाको खडा करना चाहिये। नहीं तो निर्बलकी घोषणासे क्या बनेगा? जगत्के अन्दर निर्बल रह सकेगा या नहीं यह भी संदेह है। क्योंकि बलसे ही यहां सब खडे हैं, बल चला जाय तो सब नीचे गिर जायंगे। खडा रहकर कार्य करना बलसे होनेवाली बात है। इसी तरह तीनों शान्तियोंकी स्थापना करना बलसे ही होनेवाला कार्य है।

पुरुषार्थका धर्म

'ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः' यह घोषणा तो कोई निर्बल भी कर सकेगा, पर इस घोषणाकी पूर्णता करना, बिना राजकीय शक्तिके विशेष प्रबल रूपमें पीछे रहे, नहीं हो सकता। वैदिक धर्ममें रहनेवाले सब व्यक्तियोंको, जो समय समयपर इन तीन शान्तियोंका घोष करते है, उनको इस दायित्वकी उत्तम कल्पना आनी चाहिये। वैदिक धर्म पुरुषार्थका धर्म है पुरुषार्थ प्रयत्न करने वाले ही यहां यशस्वी होंगे। जो आलसी और दुर्बल रहेंगे, वे पीछे पडेंगे। अब हमें देखना है कि इन तीनों शान्तियोंकी स्थापना करनेकी साधना किस तरह करनी चाहिये।

वैदिक धर्म सामुदायिक जीवनका धर्म है। यह केवल वैयक्तिक जीवनका धर्म नहीं है। वैयक्तिक जीवन और सामुदायिक जीवनका समविकास इसमें हैं। समाजवादियोंकी तरह यहां व्यक्तिको दबाकर समाजकी ही संघटनाशक्तिका विकास करनेका यत्न करनेकी घातक मनीषा यहां नहीं है और न वैयक्तिक विकासवादियोंकी तरह, यहां समाजकी ओर पूर्ण दुर्लक्ष्य करके वैयक्तिक गुणविकास करनेकी मूर्खता भी यहां नहीं है। यहां वैदिक धर्ममें तो व्यक्तिके गुणोंका पूर्ण विकास करनेका कार्यक्रम परिपूर्ण रीतिसे बनाया है और सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकासका भी उत्तम कार्यक्रम है। समविकास करनेका यह धर्म है। इसलिये इसमें किसी बातमें अधूरापन नहीं है। ऐसा यह समविकासका वैदिक धर्म मनुष्योंको व्यक्ति, राष्ट्र और विश्वमें स्थायी शान्ति स्थापन करनेका उत्तम कार्यक्रम दे रहा है।

वैयक्तिक शान्ति

वैयक्तिक शान्तिका अर्थ व्यक्तिके शरीरके अन्दरकी शक्तियोंकी शान्ति, समता अथवा अस्वस्थताका दूर होना। व्यक्तिके शरीरमें प्रथम स्थूल शरीर है जो बाहरसे दीखता

है। स्थूल-सूक्ष्म-कारण शरीर ये तीन शरीर एक दूसरेके अन्दर हैं। स्थूल शरीरमें सूक्ष्म और कारण शरीर भरपूर व्यापक हैं। इनको ही अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, और आनन्दमय कोश कहते हैं।

कोशका अर्थ थैली; ये थैलियां एक दूसरेके अन्दर हैं। अन्नमय कोश यह स्थूल शरीर है जो अन्नसे पुष्ट होता है, प्राणमय कोश इसके अन्दर है, जो जलसे तथा प्राणवायुसे पुष्ट होता है। मनोमय शरीर मन ही है, चित्त, मन, अन्तःकरण अहंकार ये यहां हैं। विज्ञानमय कोश बुद्धि है और आनन्दमय कोश आत्मा ही है।

स्थूल-सूक्ष्म-कारण शरीर कहो, अथवा अन्नमय-प्राण-मय-मनोमय-विज्ञानमय-आनंदमय कोश कहो, तो भी भाव एक ही है। इसी विषयको हम आधुनिक रीतिसे वर्णन करते हैं।

स्थूल--शरीर

प्रथम स्थूल शरीर लीजिये। हरएक प्राणी इसे देख सकता है। इसीसे व्यवहार करता है। प्रतिदिनके अनुभवसे वह जानता है कि स्थूल शरीर स्वस्थ रहा तो हमारे सब कार्य ठीक तरह होते हैं नहीं तो नहीं होते। इस स्थूल शरीरमें नाना प्रकारके रोगोंकी संभावना है। किसी न किसी अशुद्धिके होनसे यहां रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अशुद्धिके दूर होनेसे रोग चले भी जाते हैं।

आयुर्वेद

इन रोगोंको हटानेके लिये ऋषियोंने आयुर्वेद बनाया है। यह विशेषतः स्थूल शरीरकी चिकित्सा करता है। क्वचित् मानसचिकित्साका भी अन्तर्भाव इसके कार्यमें होता है। शारीरिक चिकित्सामें इंद्रियोंकी चिकित्सा आजुकी है। युरोप अमेरिकाका चिकित्साशास्त्र भी बढ रहा है। अनेक चिकित्साके साहित्योंसे यह शास्त्र उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसमें एक एक इंद्रियके विशेष ज्ञानी चिकित्सक हैं। शस्त्र वैद्य भी अच्छे अच्छे हैं। यह सब आयुर्वेद, अलोपथी और यूनानी चिकित्सा इसलिये हो रही है कि, इससे शरीर और इंद्रियां उत्तम अवस्थामें रहें और मनुष्यको सुदृढ शरीरके साथ उत्तम नीरोग और कार्यक्षम इंद्रियां मिलें और इसको दीर्घायु प्राप्त हो। केवल शरीर और इंद्रियोंकी स्थायी शान्ति स्थापन करनेके लिये कितने शास्त्र हुए हैं और कितने साधन बढ रहे हैं, देखिये। कोई एक मनुष्य अपने जीवनमें इसमें पारंगत नहीं हो सकता, इतना इस चिकित्सा शास्त्रका विस्तार हुआ है, और प्रतिदिन यह बढ रहा है। यह किसलिये हो रहा है? यह मनुष्यके शरीरमें स्थायी शान्ति स्थापन हो इसलिये यह सब संभार है। कितने ग्रंथ, कितने विद्वान् और कितने साधन मनुष्यके आध्यात्मिक अर्थात् शरीर और इंद्रियोंमें स्थायी शान्ति स्थापन करनेके लिये लग रहे हैं।

योगसाधनका मार्ग

इतने ही नहीं परंतु ऋषिमुनियोंने योगसाधनका और एक उत्तम मार्ग शुरू किया है। जिसके आसन तथा धौति वस्ती, त्राटक आदि साधन शरीर और इन्द्रियोंके स्थानमें स्वस्थता और स्थायी शान्तिस्थापन करनेके लिये ही महामुनि पतञ्जलि आदिकोंने सिद्ध किये हैं। धौतीसे पेट और पेटके ऊपरका अन्ननलिकाका मार्ग स्वच्छ और निर्दोष होता है। वस्तीसे नीचेका पेटका भाग निर्दोष होता है। त्राटकसे आंख निर्दोष होते हैं। इस तरह पञ्च-शुद्धिसे सब शरीर शुद्ध पवित्र और निर्दोष होता है। नीरोग और स्वस्थ होता है और शुद्धताका आनन्द मनुष्यको मिलता है।

आसनसे शरीरकी नसनाडियां, पुट्ठे आदि भाग निर्दोष और बलवान होते हैं। स्वस्थ होते हैं और रोगोंको दूर करनेकी शक्ति इस शरीरमें बढाते हैं। यह योगशास्त्र ऋषि-मुनियोंकी देन है जो आध्यात्मिक उन्नतिका साधन करनेके लिये सुयोग्य शरीरका निर्माण करता है।

(चित्र पृष्ठ ६-७-१५ पर देखो)

पाठक यहां देखें कि मनुष्यका शरीर स्वस्थ रखनेके कार्यके लिये कितना विस्तृत कार्य करना पडता है। इस ज्ञानकी परिपूर्णता कोई एक मनुष्य अपने जीवनमें नहीं कर सकता। इतना यह विस्तृत ज्ञान है। इतने ज्ञानसे तो शरीरकी स्वस्थता हुई, इंद्रियोंका आरोग्य हुआ। इसके पश्चात् मनको स्वस्थ करनेकी बारी आती है।

मनकी स्वस्थता

वेदमें कहा है—

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः। यजु. ५।१४

(१) प्रणाम।

(२) जानुनास।

(३) एक पाद प्रसरण।

(५) साष्टांग प्रणिपात।

(४) तुलितवपु।

(६) कशेरुसंकोच।

(९) जानुनास।
आसन दो देखो।

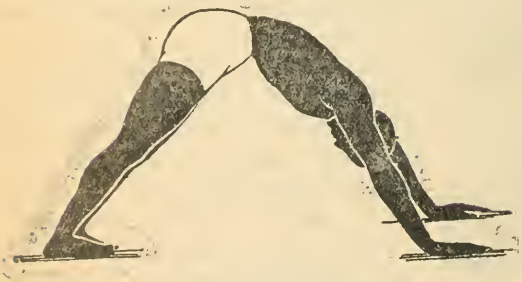

(७) कशेरुविकसन।

(८) एक पाद प्रसरण।

(१०) प्रणाम।

मत्स्येंद्रासन ।

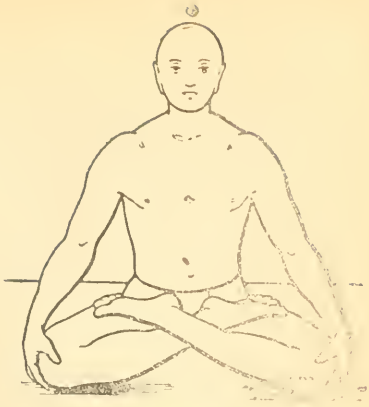

पद्मासन ।

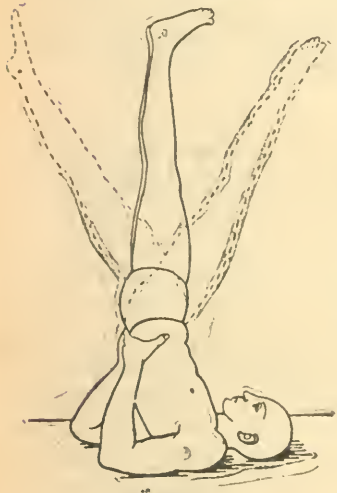

सर्वांगासन ।

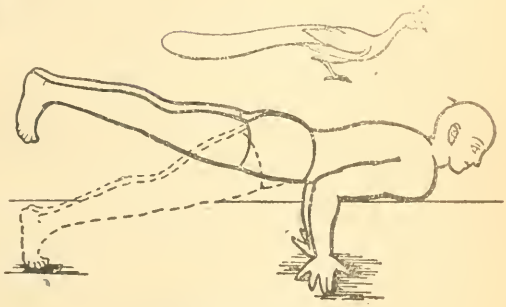

हंसासन । मयूरासन ।

सर्पासन ।

वृश्चिकासन ।

' मनका योग करते हैं, बुद्धिका योग करते हैं ' ऐसा जो कहा है वह मनकी स्वस्थता स्थापन करनेके लिये कहा है। मन अत्यन्त चञ्चल है, उसको स्वस्थ और शान्त करना बडा कठिन कार्य है। इसलिये इसके पूर्व आसन, प्राणयाम और प्रत्याहारका अभ्यास है। आसनाभ्याससे शरीरकी चंचलता दूर होती है और शरीरमें स्थैर्य आकर एक प्रकारका अपूर्व आनन्द मिलता है। प्राणायामसे मन स्थिर करनेमें बडी सहायता होती है, इसलिये कहा है कि—

चले वाते चलं चित्तं
निश्चले निश्चलं भवेत्। यो० प्रदीपिका

' प्राणकी गति चञ्चल होनेसे मन चञ्चल होता है और प्राण स्थिर हुआ तो मन स्थिर होता है ' यह नियम होनेसे मनके स्थिरीकरणके लिये प्राणके स्थिरीकरणकी आवश्यकता है, इसलिये आसनसे शरीरको स्थिर करनेके बाद प्राणायाम का अनुष्ठान कहा है। इससे मन शान्तिका अनुभव करने लगता है। इसके पश्चात् प्रत्याहारका अभ्यास कहा है। विषयोंसे इन्द्रियों और मनको निवृत्त करना और अपने स्थानमें अथवा पवित्र आलंबन पर स्थिर करनेका यह अनुष्ठान है। इससे मनकी चञ्चलता दूर होती है। ध्यानधारणा समाधि ये आगेके अभ्यास हैं। जो मनको स्वस्थता और शान्ति देनेवाले हैं।

मनुष्यके शरीरमें अवयव, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि और आत्मा इतने पदार्थ होते हैं। इनमें शान्तिस्थापन करनेकी सूचना पहिले ' शान्ति ' पदने की है। उसका विचार यहां तक संक्षेपसे हुआ। इससे पता लगा कि इस कार्यके लिये नाना शास्त्रोंका अभ्यास करना आवश्यक है। किसी एक व्यक्तिके प्रयत्नसे इतना अध्ययन नहीं हो सकता। यह तो अनेक विद्वानोंके साहचर्य और सहकारितासे होनेवाला कार्य है। इसके साथ साथ राष्ट्रशासन भी ऐसा होना चाहिये कि जिसमें रहकर एक व्यक्ति अपनी उन्नतिके लिये यथेच्छ योगसाधन उत्तम रीतिसे कर सके। राष्ट्रमें शान्ति हो, समता और न्याय हो, वैयक्तिक अनुष्ठानके लिये आवश्यक स्वतंत्रता हो। अनुष्ठानके लिये सब साधनोंकी अनुकूलता हो। गौका दूध तथा घी यथेच्छ प्राप्त हो। शालीके चावल आदि योगान्न पर्याप्त प्रमाणमें मिलता हो। किसी तरह गुण्डोंका उपद्रव न हो। योगसाधनके मठोंकी सुरक्षा शासनके सुप्रबंधसे होती रहे। ऐसी सब अनुकूलता रहेगी, तो योगसाधन होगा और मनुष्यको अपने अन्दरकी शान्तिका लाभ प्राप्त होगा।

अन्यथा योगसाधन हो नहीं सकेगा। चारों ओरसे गुण्डे आते हैं, हमला करते हैं, मारपीट हो रही है, धान, चावल, दूध, घी की न्यूनता है, जो मिलता है वह खानेके लिये मिलेगा ऐसा प्रबंध नहीं है। तो योगसाधन नहीं होगा और वैयक्तिक अशान्ति बनी रहेगी।

वैयक्तिक शान्तिके साथ योगशास्त्र, मानसशास्त्र, इंद्रिय विज्ञान, शरीरशास्त्र, आयुर्वेद, आदि शास्त्रोंका संबंध है। आरोग्य व्यवस्था राष्ट्रमें उत्तम हो, सुरक्षा हो, सस्ताई हो, झगडे फिसाद न हों, ऐसा होनेपर इस योगसाधनसे वैयक्तिक शान्तिका लाभ हो सकता है।

राष्ट्रीय शान्ति

व्यक्तिमें शान्ति योगसाधनसे स्थापित हो सकती है, पर योगसाधनका अनुष्ठान (सुभिक्ष धार्मिके राष्ट्रे) जहां सस्ताई है ऐसे धार्मिक राष्ट्रमें हो सकता है। जहां धार्मिक राज्यशासन है, वहां योगसाधन हो सकता है, यह हमने देखा। अब राष्ट्रीय अथवा सामाजिक शान्ति किस तरह स्थापन होती है वह देखिये। राष्ट्रीय शान्ति स्थापन करनेका मुख्य कार्य राज्यशासन द्वारा ही किया जा सकता है। राष्ट्रीय शान्तिके कार्यका प्रारंभ शिक्षाविभागसे होता है—

शिक्षा मंत्रीका कार्य— राष्ट्रमें सुशिक्षाका प्रचार और प्रसार सर्वत्र अच्छी तरह होना चाहिये। शिक्षामंत्री-का यह कर्तव्य है। सुशिक्षाके लिये योग्य ग्रन्थोंका निर्माण करना, सब बालकों और युवकोंको उसका प्रदान करके सुशिक्षित बनाना यह राष्ट्रीय शान्तिके लिये अत्यंत आवश्यक है। यह शिक्षा विभाग स्वतंत्र ऋषियोंके आधीन होता था। शासक उसका संरक्षण करे, पर उसके सुधारका भार स्वतंत्र वृत्तीके ऋषियोंपर रहे। गुरुकुलों द्वारा सुशिक्षाका फैलाव वैदिक समयमें होता था। और गुरुकुल राजाके द्वारा सुरक्षित परंतु विद्यावृद्धि करनेमें स्वतंत्र रहते थे। ऐसी व्यवस्था हरएक राष्ट्रमें रहनी चाहिये। नहीं तो राज्यशासकों के आधीन शिक्षाका कार्य जायगा और वे अपने रजोगुणसे पवित्र शिक्षाको कलुषित करेंगे, जिससे स्पर्धा और संघर्ष

बढेगा और सत्त्वगुण वृद्धिसे होनेवाली शान्ति कदापि स्थापन नहीं होगी। अस्तु राष्ट्रीय शान्ति इस सुशिक्षाके फैलाव पर अवलंबित है, जो सुशिक्षा सबको मिलनी चाहिये। सब जनता ज्ञानविज्ञानसंपन्न, सत्त्वगुण युक्त, स्वकर्तव्यको करनेवाली और शान्तिप्रिय होनी चाहिये, तब राष्ट्रमें शान्ति रह सकेगी।

गृहमंत्रीका कार्य— राष्ट्रके अन्दर सुरक्षा रहनी चाहिये। राष्ट्रमें—

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥ गी०

' राष्ट्रमें सज्जनोंका संरक्षण होना चाहिये, दुष्टोंका दमन होना चाहिये और वर्ण तथा आश्रमोंके कर्तव्योंका उत्तम रीतिसे पालन लोगोंके द्वारा होता रहे ऐसी सुव्यवस्था होनी चाहिये। अन्दरके गुण्डे लोग कभी उपद्रव न कर सकें और वे सज्जनोंको उपद्रव न दे सकें इतनी सुरक्षा राष्ट्रमें रहनी चाहिये। यह गृहमंत्रीका कार्यक्षेत्र है। यह इनके द्वारा ही हो सकता है। एक व्यक्ति इसमें क्या कर सकती है?

राष्ट्र सुरक्षा— राष्ट्रके अन्तर्गत सुरक्षा रही तो भी बाहरसे कोई शत्रु अपने राष्ट्रपर आक्रमण न करे और अपने राष्ट्रकी शान्तिका भंग न कर सके ऐसा प्रबंध रहना चाहिये। आन्तरिक सुरक्षाके लिये आरक्षकोंका सुप्रबंध रहना चाहिये और बाहरके शत्रुओं-को प्रतिबंध करनेके लिये उत्तम सेना सुसज्ज रहनी चाहिये। यह युद्धमंत्रीका कार्यक्षेत्र है। राष्ट्रमें दुर्गोंकी सुव्यवस्था, स्थान स्थानमें सेना विभागोंका रक्षण, समुद्रपर सागर सेना और वैमानिक सेना आदि सर्वत्र चतुरंग बलकी सुसज्जता रहेगी, तो बाहरके शत्रु दब जायंगे और वे मित्रभावसे बर्ताव करने लगेंगे। अपनी युद्धकी तैयारी जितनी उत्तम रहेगी, उतने बाह्य शत्रु उपद्रव नहीं करेंगे। पर यदि अपनी निर्बलता रहेगी, तो उसी समय बाहरके शत्रु प्रबल होंगे और वे हमला करेंगे। ऐसी अवस्थामें एक एक व्यक्ति कितना भी शान्तिके लिये प्रयत्न करता रहेगा, तो भी वे सब प्रयत्न व्यर्थ जायंगे। इसलिये अपने राष्ट्रकी युद्धकी तैयारी अच्छी रही तो ही शान्तता रहनेकी संभावना है। वैदिक धर्ममें इन्द्रका कार्य देखिये, वह अपनी मरुतोंकी सेना सर्वदा सुसज्ज रखता है, शत्रुका पूर्ण नाश करता है, शत्रुको भगाता है, शत्रुके नगरों और कीलोंका नाश करता है, अपने अनुयायियोंकी गौवें चुरानेवालोंको उग्र दण्ड देता है, उनसे गौवें वापस लाकर देता है। आदि कार्य हैं जो अपने राष्ट्र-को सुरक्षित रखते और शान्ति प्रदान करते हैं।

राष्ट्रमें ज्ञानी, शूर, व्यापारी और शिल्पी ऐसे चार प्रकारके लोग रहेंगे। उनमें शूर क्षत्रियों पर ही अन्दरके और बाहरके शत्रुओंको दूर करनेका भार रहता है। ये क्षत्रिय युद्धमें लगे रहनेपर भी नागरिक व्यवहार, अन्य तीन संघोंके नगरमें सुरक्षित रहनेके कारण, सुरक्षित रहता है। पर इसमें एक आपत्ति है, वह यह कि क्षत्रियसंघ पर ही युद्धका भार पडता है और बाकीकी जातियां आक्रमणकर्ता शत्रुको रोक नहीं सकती। इस कारण क्षत्रियोंका पराभव होते ही सब राष्ट्र शत्रुके आधीन हो जाता है। इस आपत्तिको हटानेके लिये राष्ट्रके सब लोगों-को स्वसंरक्षणार्थ युद्ध करनेकी शिक्षा कुछ मर्यादा तक मिलनी चाहिये। जिससे क्षत्रियोंका पराभव होनेपर भी अन्य नागरिक अपना संरक्षण कर सकेंगे और शत्रुको अन्दर घुसने न देंगे। अर्थात् ब्राह्मण-वैश्य-शूद्रोंको आपत्कालमें स्वसंरक्षण करनेके लिये शस्त्र ग्रहण और शस्त्र प्रयोग करने-की विद्या मिलनी चाहिये और क्षत्रियोंको तो युद्धविद्यामें प्रवीणता प्राप्त करनी चाहिये।

मनुका आदेश

शस्त्रं द्विजातिभिर्ग्राह्यं धर्मो यत्रोपरुध्यते।
द्विजातीनां च वर्णानां विप्लवे कालकारिते॥
आत्मनश्च परित्राणे दक्षिणानां च संगरे।
स्त्रीविप्राभ्युपपत्तौ च घ्नन् धर्मेण न दुष्यति॥

मनु० ८।३४८-९

' विप्लव उत्पन्न होनेपर द्विजातीके लोगोंको भी हाथमें शस्त्र लेना चाहिये और अपना संरक्षण करना चाहिये। आत्मरक्षण, स्त्री विप्र आदिके संरक्षणके लिये, गौ आदि पशुओंके संरक्षणके लिये शस्त्र लेकर शत्रुका वध किया तो उसका दोष कर्ताको लगता नहीं है।' इस तरह आप-त्कालमें सब लोगोंको शस्त्रग्रहण करके स्वसंरक्षण करने-का अधिकार है और वह योग्य है। इससे यह स्पष्ट हो रहा है कि राष्ट्रमें युद्ध करनेकी शिक्षा तो सामान्यतः सब-को मिलनी चाहिये, परंतु क्षत्रियोंको विशेष मिलनी

चाहिये। सब लोग स्वसंरक्षण करनेके लिये तैयार रहने चाहिये। जब सब जनता ऐसी जाग्रत रहेगी, तब राष्ट्रमें शान्ति स्थापित हो सकती है।

राष्ट्रके शासन करनेमें राजा अथवा राष्ट्राध्यक्ष और उसके सब मंत्री लगे रहे, और अच्छी तरह उन्होंने राष्ट्रका शासन किया तो यह शान्ति स्थिर रह सकती है। हमने ऊपर दो तीन मंत्रियोंके कार्यका ही उल्लेख किया है, पर सभी मंत्री एकनिष्ठासे इस कार्यको करने लगे, तो राष्ट्रमें शान्ति रह सकती है। हमने विस्तार न हो इसलिये दो तीन मंत्रियोंके कार्यका उल्लेख किया है। राष्ट्रके अन्दरका प्रत्येक कार्य करनेवाला राष्ट्रमें शान्ति स्थापन करनेके लिये प्रयत्नशील होना चाहिये, तब यह कार्य होनेवाला है। राष्ट्रमें थोडेसे गुण्डे उठ खडे हुए तो वे भी अशान्ति मचा सकते हैं। इसलिये प्रत्येकको अपना कर्तव्य करना चाहिये।

राष्ट्रीय शान्ति चिरस्थायी रहनेके लिये ऐसा बडा दायित्व सब सामान्यतः प्रजाजनोंपर तथा विशेषतः शासकोंपर है। इतने प्रयाससे राष्ट्रीय शान्ति स्थापन हो सकती है। यह केवल 'शान्ति' के शब्दोच्चार मात्रसे नहीं हो सकती, यह तो इतने विवरणसे पाठक जान सकते हैं।

जागतिक शान्ति

अब रही तीसरी विश्वशान्ति। इसमें सब राष्ट्रोंने मिलकर शान्ति स्थापन करनेका यत्न करना चाहिये। तब इस भूमंडल पर शान्ति स्थापन हो सकती है। यदि बडे बडे राष्ट्रशासक न मिलेंगे, और भूमंडल पर शान्तिस्थापन करनेके लिये पराकाष्ठाका यत्न नहीं करेंगे, तो विश्वशान्ति होना बडा कठिन कार्य है। प्रत्येक राष्ट्रशासक जबतक अपना स्वार्थ ही देखेगा, और अपने स्वार्थसाधनके लिये जितना चाहिये उतने अनर्थ करता जायगा, तो विश्वशान्तिकी आशा कैसी की जा सकती है? मनुष्यके अन्दरका स्वार्थ कम हो और सबमें शान्ति स्थापन करनेकी प्रबल इच्छा हो, तब यह विश्व शान्ति स्थापन हो सकती है।

विश्वशान्तिमें भूचाल, अतिवृष्टी, अनावृष्टि सूर्यका प्रचण्डताप, झंझावात, जलकी प्रचंड बाढ आदि अनेक आपत्तियां हैं। इनका निवारण करनेका प्रयत्न सब राष्ट्रोंके सामूहिक रीतिसे ही हो सकता है। अन्यथा इसमें सफलता होनेवाली नहीं है।

शासक शक्तिकी सहायता

यहां तकके विवरणसे हमने देखा कि व्यक्तिमें शान्ति स्थापन करनेका कार्य हो, समाजमें या राष्ट्रमें शान्ति स्थापन करनेका कार्य हो अथवा विश्वशान्तिका प्रयत्न करना हो, ये सब कार्य राष्ट्रकी अथवा राष्ट्रोंकी शासन शक्तियां मिलेंगी और सामूहिक रूपसे कार्य करेंगी, तभी यह कार्य हो सकता है, अन्यथा नहीं होगा। व्यक्तिकी सदिच्छासे यह कार्य होनेवाला नहीं। पर यह यहां स्पष्ट करना चाहिये कि यदि व्यक्तिमें सदिच्छा है तो व्यक्तिको शान्तिके लिये यत्न करना चाहिये और शान्तिके विचार फैलानेका यत्न करना तो व्यक्तिके अधीन ही है।

शान्तिके विचारोंकी जाग्रति तो व्यक्ति कर सकती है। यह तो करना ही चाहिये। पर यह भी यदि शासक शक्ति इसके पीछे रही, तो ही इसमें सफलताकी संभावना अधिक हो सकती है। वैदिक धर्मने इन तीन शान्तियोंकी घोषणा करके कितना बडा कार्यक्रम करनेका भार लोगोंपर रखा है, यह देखिये। यह कर्तव्य इस लोकमें सुख शान्ति स्थापनार्थ करना चाहिये यह वेदका आदेश है देखिये—

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिः-
आपः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः
शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः
सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः
सा मा शान्तिरेधि॥ वा० य० ३६।१७

'द्यु, अन्तरिक्ष और पृथिवी पर शान्ति हो, जलमें शान्ति हो, औषधि वनस्पतियोंमें शान्ति हो, सब सूर्य आदि देवोंसे शान्ति प्राप्त हो, ज्ञान शान्ति स्थापन करनेवाला हो, सब जो भी यहां है वह शान्तिकी स्थापना करनेमें सहायक हो और जो शान्ति हो वह सच्ची शान्ति हो, ऐसी सच्ची शान्ति मुझे प्राप्त हो।' यह वेदका कथन बडा मननीय है। इसका थोडासा अधिक मनन करना चाहिये।

त्रिलोकीमें शान्ति

द्युलोकमें सूर्यादि देवता हैं, वहां शान्ति हो। सूर्यपर किसी कारण धब्बे आने लगे, तो उसका परिणाम वायुमण्डल पर तथा पृथिवीपर होता है और बडे कष्ट उत्पन्न होते हैं, इसलिये द्युलोकमें ऐसा कोई उत्पात न हो, कि जिससे यहां

कष्ट होने लग जांय। यह इच्छा उत्तम है। पृथ्वीपरका जीवन ही सूर्य की जीवन शक्तिपर अवलंबित है इसलिये द्युलोकमें शान्ति रही तो पृथ्वीपर शान्ति रहेगी। इसलिये इस मंत्रमें क्रमसे कहा है कि "द्यौः शान्तिः, अन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी शान्तिः" यह योग्य ही है। यदि सूर्यलोकमें अशान्तिका प्रारंभ हुआ, तो मनुष्य वहां क्या कर सकता है? इसलिये यहां दिव्य परमात्मशक्तिसे प्रार्थना है कि द्युलोक और अन्तरिक्षलोकमें शान्ति रहे और तदनुरोधसे पृथिवीपर भी शान्ति रहे। इसके नंतर कहा है कि- 'आपः शान्तिः ओषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः' अर्थात् औषधिजल और वनस्पतियोंमें शान्ति रहे।

जलका महत्त्व

जल एक प्रकारका जीवनरस है। यह एक अद्भुत औषधि-रस ही है। इसलिये कहा है-

अप्सु मे सोमो अब्रवीत्
अन्तर्विश्वानि भेषजा।
अग्निं च विश्वशंभुवम्
आपश्च विश्वभेषजीः। ऋ०

'सोमने कहा कि जलमें सब प्रकारकी औषधियां हैं। अग्नि सब प्रकारका कल्याण करनेवाला है और जलमें सब औषधियां हैं।' ऐसा यह प्रभावी जल शान्ति स्थापन करे, रोग दूर करे, आरोग्य देवे, बल बढावे और अशान्ति दूर करे। यह जलका कार्य है। शरीरमें क्या और विश्वमें क्या जलसे शान्ति होती है। प्रखर धूपके पश्चात्, ग्रीष्मसमयके नंतर जब वर्षा होती है, उस समय सर्वत्र एक दम शान्ति होती है। इसी तरह शरीरके दोष दूर करके शरीरमें जल जाकर विषमता दूर करता है और समता स्थापन करता है। इस तरह जल शान्तिस्थापन करनेवाला है। जलका रस ही औषधि वनस्पतियोंमें जाकर नाना प्रकारके रसोंसे मिलकर शरीरान्तर्गत दोषोंको धोडाल-लकर (ओषधीः दोषं धयन्ति) शरीरको निरोगित्व प्रदान करना जलसे ही होता है। विश्वमें कितना महान् समता स्थापन करनेका कार्य यह जल कर रहा है वह देखने योग्य है।

"विश्वेदेवाः शान्तिः" सब देव शान्ति स्थापन करें। पृथिवी, आप, तेज, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र आदि सब देवता यहां शान्ति स्थापन करें, यह इसका तात्पर्य है। अग्नि और वायु ये जबतक शान्त रहते हैं तबतक ठीक है, परंतु जब ये ही भडक जाते हैं तब ये ही बडी अशान्ति उत्पन्न करते हैं। इसी तरह प्रत्येक देवताके संबंधमें है। इसलिये शान्तिस्थापनमें सब देवोंकी अनुकूलता होनी चाहिये यह इसका आशय है।

ज्ञान शान्तिस्थापन करनेवाला हो

'ब्रह्म शान्ति' यह बडा महत्त्वका वचन है। जो ज्ञान यहां हमें प्राप्त होता है, वह शान्ति स्थापन करने-वाला हो, यह इसका तात्पर्य है। इस समय नाना राष्ट्रोंमें जो ज्ञान फैल रहा है, वह वास्तवमें अज्ञान है, अतएव वह भ्रान्ति विद्वेष फैला रहा है। यदि सत्यज्ञान जगत्में फैल जाय, तो वह समता तथा शान्ति फैलानेमें सहायता करेगा। इसलिये इस वेद वचनमें कहा है कि 'ब्रह्म शान्तिः' ज्ञान शान्ति फैलानेवाला हो। यह सत्य है। इसलिये जगत्में शान्ति स्थापन होनी चाहिये तो सत्यज्ञान, ब्रह्म-ज्ञान, राष्ट्रमें फैलना चाहिये। ज्ञान भी शान्ति बढानेवाला चाहिये। मनुष्य मनुष्यमें, जाति जातिमें, राष्ट्र राष्ट्रमें विद्वेष इस समय फैल रहा है, इसका कारण आजकलका ज्ञान ज्ञानका आभास उत्पन्न करनेवाला, परंतु वस्तुतः अज्ञान ही फैलनेवाला है। इसलिये इस वेदवचनने कहा है कि 'ज्ञान शान्ति देनेवाला हो' और वह राष्ट्रमें फैले। तब शान्तिस्थापन होनेमें सहायता होगी।

आगे 'सर्वं शान्तिः' सब जो भी कुछ है वह शान्ति स्थापनके कार्यमें सहायक हो ऐसा कहा है। जो भी प्रयत्न होता है, जो साधन मिलते हैं, जो भी विचार किये जाते हैं, वे सबके सब शान्ति बढानेवाले हों। सब शान्ति और समता स्थापन करनेवाले होंगे, तभी शान्ति स्थापन होगी। उनमें एक भी दुष्ट होगा, दोषी होगा तो वह सबका बना बनाया कार्य बिगाड देगा और उसके कारण अशान्ति फैल जायगी। इसलिये यह वचन बडा महत्त्वपूर्ण उपदेश कर रहा है कि सबके सब शान्ति स्थापनके साधन सचमुच शान्तिके सहायक ही हों।

शान्ति सच्ची शान्ति हो

'शान्तिरेव शान्तिः' जो शान्ति होगी वह सच्ची

शान्ति होनी चाहिये । यह तो बडा ही उत्कृष्ट तथा अर्थ-पूर्ण वचन है । शान्ति भी भ्रम उत्पन्न करनेवाली होती है जैसी मुर्दोंकी शान्ति है । यह सच्ची शान्ति नहीं है । यह तो मृत्यु है । हमें मृत्युकी शान्ति, परवशतामें जो अकर्मण्यता होती है वैसी नहीं चाहिये । हमें जीवित अवस्थाकी शान्ति चाहिये । इसलिये कहा है कि शान्ति भी सच्ची शान्ति होनी चाहिये ।

ऐसी सच्ची शान्ति ' सा मा शान्तिः पधि ' ऐसी उत्तम शान्ति हमें प्राप्त हो । ऐसा शान्तिके विषयमें वेदका कहना है । यह सब मंत्र महत्त्वपूर्ण उपदेश कर रहा है और शान्तिस्थापन करनेका मार्ग यह मंत्र बता रहा है। वेद इस शान्तिके विषयमें और अधिक क्या कहता है वह अब देखिये-

बुद्धि और धन

शं नः पुरंधिः शमु सन्तु रायः ।

ऋ० ७।३५।२

' हमारी बुद्धि शान्ति बढानेवाली हो और हमारे धन शान्ति फैलानेके कार्यमें लगें । ' यह कितना उत्तम उपदेश है ? इस समय लोगोंकी बुद्धि युद्ध बढानेके कार्य कर रही है । राष्ट्रोंके धन युद्धके साधन बढानेके कार्य कर रहे हैं । इसलिये वेद कहता है कि ऐसा नहीं होना चाहिये । बुद्धि और धन शान्तिके कार्यमें लगने चाहिये । तथा—

शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु ।

ऋ० ७।३५।४

' पुण्य कर्म करनेवालोंके पुण्य कर्म शान्ति स्थापन करनेवाले हों । ' नहीं तो वे ही युद्धकी चेतना बढानेवाले होंगे तो कितना अनर्थ होगा । तथा-

शमु सन्तु यज्ञाः... ... शमु अस्तु वेदिः ।

ऋ० ७।३५।७

' यह शान्ति करनेवाले हों...और वेदी भी शान्तिका प्रचार करनेवाली हो । ' पाठकोंको यहां आश्चर्य प्रतीत होगा कि यज्ञ और वेदी शान्ति स्थापन करनेवाली हो, ऐसा क्यों कहा है ? क्या कभी यज्ञसे आपत्ति फैल सकती है ? इस विषयमें इतना ही कहना है कि चाणक्यके अर्थशास्त्रमें ऐसे यज्ञ और उनमें हवन करनेके ऐसे हविर्द्रव्य कहे हैं कि ऐसे यज्ञोंसे राष्ट्रमें रोग फैलते हैं और मनुष्य मर जाते हैं, ये यज्ञ शत्रु राष्ट्रमें करनेके लिये हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि ऐसे यज्ञ हैं कि जो अशान्ति फैलाते हैं । इसलिये यहां कहा है कि यज्ञ और वेदी शान्ति स्थापन करनेवाले हों । अर्थात् रोग फैलनेवाले हवन कोई न करे, परंतु आरोग्य बढानेवाले ही यज्ञ किये जांय । तथा और कहा है--

राजा शान्ति स्थापन करे

शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः ।

ऋ० ७।३५।१०

' राष्ट्रका राजा हमारे लिये शान्ति स्थापन करनेवाला हो । ' यह तो हमने प्रारंभसे ही देखा है कि इन तीनों शान्तियोंकी स्थापना करनेके लिये शासककी अर्थात् राजाकी अनुकूलता चाहिये । विना राजा शान्तिस्थापनके लिये यत्न करे, किसी एक व्यक्तिके प्रयत्नसे शान्ति स्थापन हो नहीं सकती । इसीलिये यहां कहा है कि राष्ट्रका पति शान्तिस्थापन करनेवाला हो । यह राजा शान्तिस्थापन करनेवाला होगा, तो राष्ट्रमें शान्तिस्थापन होगी, अन्यथा गुण्डपन फैलेगा और अशान्तिके भंवरमें प्रजा त्रस्त हो जायगी । तथा—

शान्ति फैलानेवाली विद्या

शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ॥ ऋ० ७।३५।११

' विद्या देवी अनेक लोगोंकी बुद्धियोंके साथ शान्ति स्थापन करनेवाली हो । ' सरस्वती विद्या है । बुद्धिवान् लोगोंकी बुद्धियां इस विद्याका ग्रहण करती हैं और विद्याका प्रचार करती हैं । ये बुद्धियां शान्ति करनेवाली होंगी, तो ही अच्छा होगा, अन्यथा उलटा प्रचार होगा । इसलिये इस मंत्रने बडा उत्तम उपदेश दिया है । तथा—

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु ।
शं नः सुकृतः सुहस्ताः । ऋ० ७।३५।१२

' सत्यके संरक्षक और पुण्यकर्म करनेवालोंके सुकृत शान्तिस्थापन करनेवाले हों ' इन वचनोंमें वेदने तो बडी ही उत्तम सावधानीकी सूचना दी है । इतिहासमें बहुत वार देखा गया है कि सत्यकी सुरक्षा करनेवालोंके प्रयत्नसे कभी कभी युद्ध छिड जाते हैं और सुकृत करनेवालोंके

उत्तम पुण्यकर्म भी अशान्ति फैलानेवाले होते हैं। इसलिये सत्यके पक्षपातियोंको और सुकृत करनेवालोंको भी अपने कर्मोंका परिणाम कैसा हो रहा है यह देखना चाहिये। नहीं तो ये ही सुकृत और किसी जातिका नाश करनेवाले बनेंगे और शान्तिके स्थानपर विद्वेष और अशान्ति फैलेगी।

अथर्ववेदमें कहा है—

शान्तानि पूर्वरूपाणि शान्तं नो अस्तु कृताकृतम्।
शान्तं भूतं च भव्यं च सर्वमेव शमस्तु नः ॥२॥
इयं या परमेष्ठिनी वाग्देवी ब्रह्मसंशिता।
ययैव ससृजे घोरं तयैव शान्तिरस्तु नः ॥ ३ ॥
इदं यत्परमेष्ठिनं मनो वां ब्रह्मसंशितं। येनैव० ॥४॥
इमानि यानि पञ्चेन्द्रियाणि मनःषष्ठानि मे हृदि ब्रह्मणा संशितानि। यैरेव ससृजे घोरं तैरेव शान्तिरस्तु नः ॥ ५ ॥ अथर्व १९।९

'हमारा किया हुआ कर्म और न किया हुआ परंतु नियोजित किया कर्म यह सब शान्ति करनेवाला हो। परमेष्ठिनी वाग्देवी-वाणी है, इससे घोर परिणाम होते हैं, इसीसे शान्ति स्थापन हो। यह मन है जिसमें ज्ञानकी शक्ति है। इस मनसे घोर परिणाम भी होते हैं यह मन शान्ति स्थापन करनेवाला बने। ये पांच इंद्रिय हैं, मन जिनमें छठा है, ये ज्ञानसे तीक्ष्ण बनते हैं। इनसे घोर परिणाम होता है। ये ही शान्ति स्थापन करनेवाले बनें।'

ये मंत्र बडे अच्छे उपदेश कर रहे हैं और शान्ति स्थापनके कार्यमें योग्य संमति दे रहे हैं। मनुष्यके पास वाणी, मन, पञ्चज्ञानेंद्रिय और पञ्चकर्मेन्द्रिय होते हैं। ये अशान्ति भी फैलाते हैं और शान्ति भी फैलाते हैं। उदाहरणार्थ देखिये कि हमारी वाणी है और उसीका रूप हमारी लेखन कला है। वाणी ही लेखमें लिखी जाती है। यह वक्ताकी वाणी तथा लेखकके लेख जनताको भडकाते भी हैं और भडके हुए लोगोंको शान्त भी करते हैं। ऐसे ही मन, इंद्रियां और मनुष्यकी कृतियां हैं। ये अच्छा भी करते हैं और बुरा भी करते हैं। इसीलिये मन्त्रमें कहा है।

येनैव ससृजे घोरं तेनैव शान्तिरस्तु नः।

'जिससे घोर परिणाम होता है, उसीसे हमारे अन्दर शान्ति स्थापन हो।' यह कितनी उत्तम सूचना है यह मनन करनेवाले पाठक जान सकते हैं। एक एक इंद्रियके विषयमें यह सत्य है। उदाहरणके लिये मनुष्यका प्रजननका इंद्रिय ही देखिये। वंश सुधार करनेके लिये ही यह है। पर इसने कितने घोर परिणाम समाजमें किये हैं देखिये। सब इतिहासमें हुए क्रूर कृत्य इसके कारण हैं। कितने खून, कितनी खराबी और कितनी कतलें इस इंद्रियके घोर परिणामके कारण हुई हैं। पर वास्तवमें यदि यह इंद्रिय अपनी मर्यादामें रहेगा तो जगतमें सुप्रजा उत्पन्न होकर कितना कल्याण होगा, इसका ज्ञान विचार करनेसे विदित हो सकता है। पूर्व स्थानमें 'द्यौः शान्ति' यह यजुर्वेदका मन्त्र दिया है। वैसा ही मंत्र थोडे हेरफेरसे अथर्ववेदमें आया है वह अब देखिये—

पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिर्द्यौः शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे मे देवाः शान्तिः सर्वे मे देवाः शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिभिः। ताभिः शान्तिभिः सर्वे शान्तिभिः शमयामोऽहं यदिह घोरं यदिह क्रूरं यदिह पापं तच्छान्तं तच्छिवं सर्वमेव शमस्तु नः ॥ अथ० १९।९।१४

'पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोकोंमें शान्ति रहे, जल, ओषधि और वनस्पति शान्ति बढानेवाली हों, सब देव शान्ति स्थापन करें, शांतिसे सच्ची शांति स्थापन हो। इन शांतिके उपायोंसे सब अशान्ति, घोर, क्रूर और पाप हो वह सब दूर होकर सर्वत्र शुभ ही शुभ हो, सर्वत्र आनन्दमयी शान्ति स्थापन हो जाय।' यह मंत्र पूर्वस्थानमें दिये मंत्र जैसा ही है, पर इसमें थोडे शब्दोंमें परिवर्तन है। पाठक पूर्वोक्त यजुर्वेदके मन्त्रसे इस अथर्ववेदके मंत्रकी तुलना करें और मननपूर्वक बोध प्राप्त करें।

विश्वशान्तिके लिये वेदने जो अनेक आदेश दिये हैं वे ये हैं। इनका मनन करनेसे पता लग सकता है कि यह प्रत्येक व्यक्तिके लिये और प्रत्येक राष्ट्रशासकके लिये यहां भरपूर कार्यक्रम दिया है। व्यक्तिकी उन्नति होनी चाहिये। इस कार्यके लिये योगसाधन, उपासना, वेदाध्ययन, सद्ग्रन्थोंका अध्ययन, सज्जनोंकी संगति आदि साधन हैं। व्यक्तिकी उन्नतिमें बाधा न हो और सामाजिक तथा राष्ट्रीय उन्नतिका साधन होजाय, इसलिये स्वराज्य तथा सुराज्य शासन

की सहायता आवश्यक है। इसीसे राष्ट्रमें तथा राष्ट्रके बाहर शान्ति स्थापन हो सकती है और सब लोग आनन्दमें रह सकते हैं। भयसे मुक्त होकर सुखका अनुभव कर सकते हैं।

सबका कार्य

यह शान्ति स्थापनका कार्यक्रम पृथ्वीके ऊपरके संपूर्ण राष्ट्रोंके लिये है। आज हम एक एक व्यक्ति 'ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः' ऐसा बोलते हैं और कई बडी घोषणा भी करते हैं। पर घोषणा करनेवाले यदि अपनी दिनचर्या देखेंगे, तो उनको स्वयं पता लगेगा कि, वे दिनके एक क्षणमें भी शान्तिस्थापनके वेदद्वारा उक्त कार्यक्रमको तत्परतासे करते नहीं हैं। अनुष्ठान न करनेपर सिद्धि किस तरह प्राप्त हो सकती है? साधारण खान पान भी योग्य अनुष्ठानके विना सिद्ध नहीं हो सकता, फिर वैयक्तिक-राष्ट्रीय-जागतिक शान्ति विना अनुष्ठानके किस तरह सिद्ध हो सकेगी? और यदि अनुष्ठान न करनेसे जगत्में शान्ति नहीं हुई, और सर्वत्र अशान्ति और अस्वस्थता, अथवा संघर्ष, स्पर्धा और युद्ध होने लगे, तो हमारे त्रिवार शान्तिका घोष करनेका क्या प्रयोजन होगा? वैदिक धर्मका एक एक वचन विशेष अनुष्ठानका सूचक है। वेद मंत्रका प्रत्येक पद, वचन और मंत्र एक एक अनुष्ठान बताता है। वह अनुष्ठान मनुष्यको करना चाहिये। मनुष्यपर उस अनुष्ठानको यथा-योग्य रीतिसे करनेका बडा भार है। मनुष्यका नाम 'ऋतु' है। यह एकसो पचीस वर्ष जीवित रहकर सौ वर्ष सौ क्रतु करके यह 'शतक्रतु' बननेवाला है। इसका यह 'क्रतु' नाम इसका जन्म ही अनुष्ठान करनेके लिये है यह बता रहा है। यदि इसका जन्म ही अनुष्ठानके लिये है, तब तो इसको अपना जीवन यज्ञानुष्ठानमें ही लगाना चाहिये।

वेदका कोई शब्द लीजिये, वचन लीजिये किंवा मन्त्र अथवा सूक्त लीजिये, मनुष्यके सन्मुख उन्नतिका परिपूर्ण कार्यक्रम वह रखता है। जो इस अनुष्ठानको करते हैं, वे कृतकृत्य होते हैं। उनका जीवन सफल होता है। जो अनुष्ठान करनेमें दत्तचित्त नहीं रहते, वे असफल होते हैं, और पश्चात्तापसे त्रस्त होते हैं।

अनुष्ठानसे तारण

वैदिक धर्म केवल विश्वाससे तारण नहीं मानता, अनुष्ठानसे ही तारण होनेवाला है। इस निबंधका विषय 'शान्तिः शान्तिः शान्तिः' है, ये तीन पद इस जगतके व्यवहारमें शान्ति स्थापन करनेके लिये अनुष्ठान बता रहे हैं।

यह कोई अभौतिक सुखके लिये अनुष्ठान नहीं है। मरणोत्तर कुछ अवस्था विशेष प्राप्त करनेके लिये यह अनुष्ठान नहीं है। यहां इस जगत्में जीतेजी अनुभवमें आनेवाले शान्ति समाधानके लिये प्रसन्नतापूर्वक आनन्द प्रसन्नताकी प्राप्तिके लिये यह अनुष्ठान है। इस जीवनमें यह आनन्द मनुष्यको लेना है, इसीलिये यह अनुष्ठान है।

यदि इस जगत्के मनुष्य 'शान्ति' के त्रिवार उच्चारण करनेसे जो अनुष्ठान सूचित होता है, उस अनुष्ठानको करेंगे और उससे व्यक्तिमें, राष्ट्रमें और जगत्में शान्ति स्थापन करनेमें सफल हो जायंगे, तो उनको जो आनन्द, जो समाधान और जो शांतिका लाभ होगा वह यहां जीतेजी होगा।

सर्वत्र आरोग्य, निर्भयता, नीरोगिता, विपुलता, सुख, क्षेम, शान्ति, प्रसन्नताका आनंद मिलेगा। यही प्राप्त करनेके लिये ही मनुष्यने जन्म लिया है। जो प्रयत्न करेंगे वे सफल होंगे।

ओंकारका महत्त्व

त्रिवार 'शांति' के पूर्व 'ओं' कार बोला जाता है। इसका थोडासा मनन करना चाहिये। (अवति इति ओं) संरक्षण करता है वह ओं है। ओंका अर्थ संरक्षण है। 'अव्' धातुका अर्थ 'रक्षण, प्रगति, कांति, प्रीति, तृप्ति, ज्ञान, प्रवेश, श्रवण, स्वामी होना, याचना, क्रिया, इच्छा, प्रकाशना, प्राप्ति, आलिंगन, दान, स्वीकार, होना, बढना' आदि हैं। मनुष्य मात्रके जीवनमें ये व्यवहार होते ही हैं। ये व्यवहार करते हुए तीनों शान्तियोंकी स्थापना हो ऐसा प्रयत्न करना चाहिये। इस एक एक अर्थका मनन करके अधिक बोध प्राप्त करनेके लिये इस लेखमें अपने पास समय नहीं है। ओंकारके अर्थोंकी व्याप्ति इतनी विशाल है। ओंकारसे बोधित होनेवाले इतने व्यवहारोंसे शान्ति

स्थापन होनी चाहिये। और इसके विपरीत परिस्थिति निर्माण नहीं होनी चाहिये। इतनी दक्षता धारण करनेकी सूचना यहां इस ओंकारसे मिलती है।

ओंकारमें 'अ-उ-म' ये तीन अक्षर हैं। जाग्रति-स्वप्न-सुषुप्तिका बोध इनसे होता है। यह भाव माण्डूक्य उपनिषदमें कहा है। अर्थात् जाग्रति स्वप्न सुषुप्तिमें उत्तम शान्तिका अनुभव प्राप्त होना चाहिये। यह इसका तात्पर्य है।

'अ' कारसे 'आदि अथवा प्रथम' होना, 'उ' कारसे उत्तम होना और 'म' कारसे मान्य होना यह भाव भी उक्त उपनिषदमें दिया है। उत्तम परिपूर्ण उन्नत होनेका भाव अ-उ-म के अर्थमें है। यह भाव 'ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः' के साथ जोडकर देखिये। इसका विचार पाठक करें और ऐसी उत्तम प्रसन्नताकी शान्ति प्राप्त करें और आदर्श जीवन व्यतीत करें।

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।

व्यक्तिमें शान्ति हो, राष्ट्रमें शान्ति हो, जगतमें शान्ति हो।

मयूरासन।

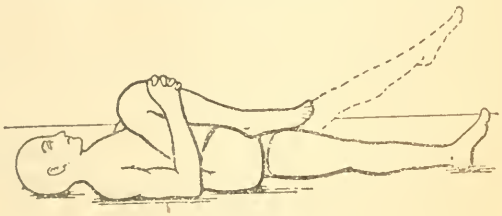

पवनमुक्तासन।

पश्चिमोत्तानासन।

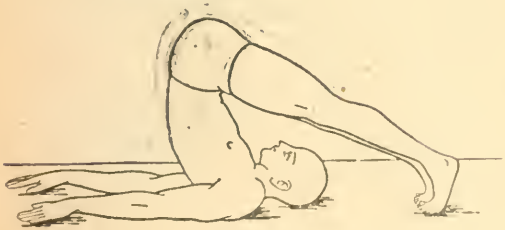

हलासन।

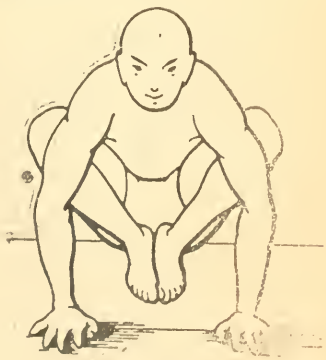

बकासन।

प्र श्न

१ शांतिका तीन वार उच्चारण क्यों किया जाता है ?

२ तीन प्रकारके कष्ट कौनसे हैं ?

३ तीन प्रकारके कष्टोंसे मनुष्य किस तरह बच सकता है ?

४ जागतिक शान्तिकी सिद्धिके लिये कौन यत्न कर सकता है ?

५ राष्ट्रीय शान्तिकी स्थापना कौन कर सकता है ?

६ वैयक्तिक शान्ति किस तरह सिद्ध हो सकती है ?

७ योगसाधन किस देशमें हो सकता है ?

८ योगसाधन करनेके लिये अनुकूल परिस्थिति कौनसी है ? वह किस प्रकारके राज्यमें हो सकती है ?

९ विश्वशान्ति कैसी होगी ? कौन करेगा ? उसके साधन कौनसे हैं ?

१० क्या बलके विना शान्ति स्थापन करनेका कार्य हो सकता है ? कौनसे बल चाहिये जिससे शान्ति स्थापन हो सकती है ?

११ वैदिक धर्म व्यक्तिगत धर्म है वा सामुदायिक अथवा दोनों प्रकारका ?

१२ व्यक्तिमें शान्तिके लिये जो योगसाधन आवश्यक है उसका वर्णन करो ।

१३ आयुर्वेदसे कौनसे लाभ होते हैं और कौनसी शान्ति स्थापन हो सकती है ?

१४ मनकी स्वस्थता और शान्तिके लिये कौनसा उपाय करना उचित है ?

१५ राष्ट्रीय शान्ति कौन स्थापन कर सकता है और किस रीतिसे उसकी स्थापना हो सकती है ? इन उपायोंका वर्णन करो ।

१६ ईश्वरके त्रिविध कार्य कौनसे हैं जो राष्ट्रोन्नतिमें साधक होते हैं ?

१७ किस समय द्विजातियोंको शस्त्र धारण करना योग्य है ?

१८ क्या शासक शक्तिकी सहायताके विना कोई शान्ति स्थापन हो सकती है ? हो सकती है तो किस तरह और न हो सकती हो तो क्यों ?

१९ विश्व शान्तिकी कौनसी कठिनता है ?

२० जलसे कहां शान्ति स्थापन होती है ?

२१ ज्ञानसे कहां शान्ति स्थापन होगी ?

२२ क्या सब प्रकारकी शान्ति हितकारिणी है ?

२३ बुद्धि और धनसे कैसी शान्ति हो सकेगी ?

२३ शान्ति स्थापन करनेकी इच्छा करनेवाले किस तरह व्यवहार करें ?

२५ ओंकारका अर्थ क्या है ?

२६ तीनों शान्तियोंका परस्पर संबंध कौनसा है ?

२७ अ उ म् से किसका बोध होता है ?

२८ त्रिलोकीमें पदार्थोंका मानवी उन्नतिके साथ कौनसा संबंध है ?

२९ पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोकमें कौन कौनसे पदार्थ हैं कि जो मानवके लिये अत्यंत आवश्यक हैं ? जिनके विना जीवन नहीं चल सकता ऐसे पदार्थ कौनसे हैं ?

३० बाह्य विश्व और मानव शरीरका परस्पर संबंध क्या है ? वह संबंध बताओ ।